आध्यात्म की दो मंजिले

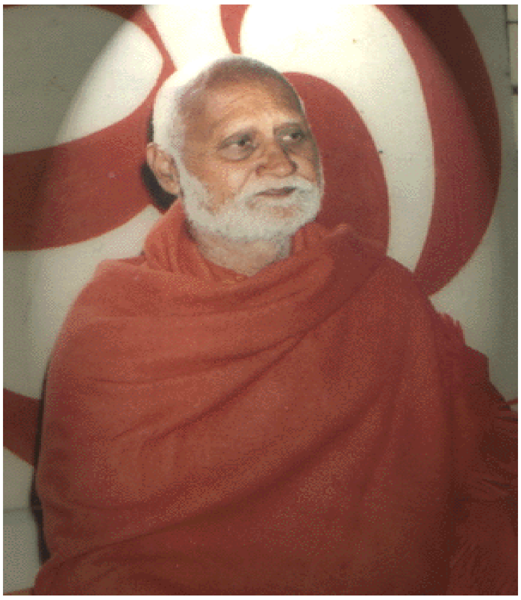

(स्वामी शंकरानन्द)

आध्यात्मिक जीवन के विकास की दो मंजिलें हैं - पहले कर्म सुधार के द्वारा अपने स्वभाव का सुधार करना और फिर अविद्या का नाश कर परमात्म स्वरूप में स्थिर होना । धर्माधर्म के विवेक से पहली मंजिल में प्रवेश होता है और स्वधर्म तथा सामान्य धर्म का पालन करने से इस मंजिल का उद्देश्य पूरा होता है । यहाँ पहुंच कर साधक को भौतिक सुख, कीर्ति और स्वर्ग की अनित्यता और तुच्छता समझ में आ जाती है । इनमें कहीं उसकी प्रियता नहीं रह जाती । वह विरक्त हो जाता है । अब उसके सामने दूसरी मंजिल का द्वार खुलता है । दूसरी मंजिल परमार्थ साधना की है।

परमार्थ पथ साधक को शरीर से ऊपर उठाकर व्यक्तित्व के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा देता है। जैसे पर्वत शिखर पर चढ़ने के लिये प्रायः दो मार्ग होते हैं - एक सीधा किन्तु सकरा व कठिन रास्ता और दूसरा पर्वत के चारों ओर घूम कर जाने वाला चौड़ा और अपेक्षाकृत सरल रास्ता । ठीक इसी प्रकार अपने व्यक्तित्व के उच्तम शिखर पर पहुँचने के लिये एक ज्ञान योग का सीधा-सकरा रास्ता है और दूसरा भक्तियोग का लम्बा चौड़ा रास्ता ।

पहले रास्ते पर वही चढ़ सकते हैं जो सशक्त हैं । कम शक्ति रखने वाले व्यक्ति अपने लिये दूसरा रास्ता चुनते हैं । निर्मल बुद्धि व विवेकबल से युक्त ज्ञान के रास्ते से परमार्थ शिखर पर बहुत जल्दी पहुँचा जा सकता है, किन्तु बहुत कम मनुष्यों में

ऐसी सामर्थ्य होती है ।प्रायः लोग भावना प्रधान होते हैं। उनके पास श्रद्धा का ही विशेष बल होता है । वे उपासना और भक्ति के द्वारा अपनी दुर्बलताओं को दूर करते हुये धीरे-धीरे आगे बढ़ते रहते हैं । घुमावदार लम्बे-चौड़े मार्ग पर चलते-चलते वे भी एक दिन उसी शिखर पर पहुँच जाते हैं जहाँ बुद्धि व विवेक से पहुँचे हुये व्यक्ति पहले से बैठे दिखाई देते हैं । जो साधक जिस रास्ते पर सफलता प्राप्त कर लेता है, उसे वही रास्ता ज्यादा सुगम प्रतीत होता है । तुलसीदास जी ने वर्तमान काल में कलियुग का प्रभाव देखकर भक्ति मार्ग ही श्रेष्ठ माना है ।

उपनिषद् परमार्थ पथ के परिपोषक हैं । उनमें अविद्या का नाश कर विद्या के बल पर परमतत्व का साक्षात् अपरोक्ष दर्शन प्राप्त करने का मार्ग दिखाया गया है । हृदय में विद्या का उच्चवल प्रकाश प्रकट होने पर अद्वितीय नित्य तत्व की उपलब्धि हो जाती है । उपनिषदों में ज्ञान व उपासना दोनों को विद्या माना गया है । 'विद्या' शब्द केवल ब्रह्मज्ञान सूचक नहीं है, बल्कि उस ज्ञान को प्राप्त करने के जो साधन या मार्ग हैं उन्हें भी विद्या कहते हैं । जैसे शांडिल्य विद्या, प्राण विद्या, प्रणव विद्या आदि । प्रायः सभी उपनिषदों में ब्रह्मज्ञान कराने के लिये ज्ञान व उपासना दोनों का वर्णन है । उसका मुख्य कारण अधिकारी भेद है ।

किन्तु ज्ञान व भक्ति में किसी को छोटा या बड़ा कहना उचित नहीं है । दोनों की अपनी महिमा है और दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं । परमात्मा का ज्ञान हुये बिना उसमें प्रेम नहीं हो सकता और बिना प्रेम परमात्मा का ज्ञान भी सम्भव नहीं है। इसलिये ज्ञानीजन ज्ञान का विस्तार करते समय भक्ति का आश्रय लेना नहीं भूलते और भक्त लोग भी परमात्मा के प्रेम की महिमा गाते समय उसका ज्ञान प्राप्त करने के लिये उपासना भी करते हैं । गीता में ज्ञान व भक्ति दोनों के प्रसंग आते हैं। भगवान उन दोनों के अनन्योआश्रित संबंध को बहुत अधिक महत्व देते हैं । भगवान् आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी चार प्रकार के भक्तों का वर्णन करते हुये कहते हैं -

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्ता एक भक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ।।७-१७।।

अर्थात् उनमें मेरे साथ एकीभाव से नित्य स्थित अनन्य प्रेम रखने वाला ज्ञानी पुरुष अति उत्तम है, क्योंकि उस ज्ञानी को मैं अत्यन्त प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मुझे भी अत्यन्त प्रिय है ।

भगवान आगे कहते हैं -

उदारा सर्व एवैते त्वात्मैव मे मतम् ।

आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ।।७-१८।।

ये सभी प्रकार के भक्त उदार हैं परन्तु ज्ञानी भक्त तो मेरा स्वरूप ही हैं - ऐसा मेरा मत है । वह मुझसे युक्त होकर अति उत्तम गति अर्थात् मुझ में ही स्थित हो जाता है ।

परा भक्ति व ज्ञान समतुल्य हैं । शुद्ध ज्ञान की परणिति परमात्मा के पूर्ण प्रेम में होती है और परम भक्ति ही परमात्म स्वरूप का अपरोक्ष ज्ञान है । अद्वैतवादी आदि शंकराचार्य भगवान हरि, हर व देवी के महान भक्त थे । संत ज्ञानेश्वर श्रीकृष्ण के परम भक्त थे । रामकृष्ण परमहंस ने काली माता की उपासना की और अद्वैतवादी गुरू तोतापुरी महाराज से ज्ञान प्राप्त किया । बंगाल के गौरांग महाप्रभु अद्वैत वेदान्त के विद्वान थे, फिर भी वे हरि नाम का संकीर्तन करते हुये सड़कों पर नाचते थे । परम भक्त तुलसीदास में ज्ञान की क्या कमी थी?

मानवी व्यक्तित्व के तीन मुख्य स्तर हैं - शरीर, मन और बुद्धि । परमात्मा की दिव्यता प्रकट होने पर इन तीनों स्तरों पर उसका प्रकाश दिखाई देता है । परमार्थ पद तो एक ही है चाहे कोई भक्ति मार्ग से वहाँ पहुँचे या फिर ज्ञान मार्ग से। परमार्थ शिखर पर आसीन व्यक्ति की बुद्धि शंकराचार्य की तरह, हृदय गौतम बुद्ध की तरह और हाथ राजा जनक की तरह काम करने लगते हैं । जिसने आत्मा की अखण्डता का अनुभव कर लिया है उसे समस्त प्राणियों से सहज प्रेम हो जाता है और वह निःस्वार्थ भाव से सबकी सेवा करता है ।

भक्तियोग से उद्धृत्